वामन महापुराण[1] में शिवतत्त्व

विष्णु पुराण (III/6/21-24), लिंग पुराण (1/39/61-63), भागवत (XII/13/4-8), ब्रह्मवैवर्त पुराण (IV/133/11-21); नारद पुराण (I/105/21-28), वराह पुराण (112/74-77), इत्यादि में वामन पुराण को महापुराणों की गणना में शामिल किया गया है जबकि गरुड एवं बृहद्धर्म पुराणों में इसे महापुराण न मानकर उपपुराण माना गया है। चाहे इसे हम महापुराण स्वीकार करें या न करें, इससे हमारे विवेचन में कोई फर्क नहीं पड़ता। हाँ एक बात यहाँ बता देना आवश्यक है कि महत्त्वपूर्ण एवं प्राचीन सभी पुराणों में वामन पुराण को महापुराण ही माना गया है। नारद पुराण के अनुसार इस पुराण के पूर्व भाग एवं उत्तर भाग दोनों को मिलाकर दस हजार श्लोक होने चाहिये। उत्तर भाग में एक-एक हजार श्लोकोंवाली चार संहिताएँ-माहेश्वरी, भागवती, सौरी और गाणेश्वरी-हैं। परन्तु वर्त्तमान में उपलब्ध वामन पुराण के श्लोकों की संख्या लगभग छह हजार है। नारद पुराण में प्राप्त वामन पुराण की विषय-सूची को देखने से लगता है कि इस पुराण के उत्तर भाग की संहिताएँ आजकल उपलब्ध नहीं हैं।

वामन पुराण मुख्यत: वैष्णव पुराण है क्योंकि इस पुराण के उपक्रम एवं उपसंहार दोनों में भगवान् विष्णु की महिमा का कथन किया गया है। इतना ही नहीं, इस पुराण में वैष्णवतत्त्वों की संख्या शैवतत्त्वों से ज्यादा है-उदाहरण के लिये विष्णुपरक स्तोत्रों की संख्या सत्रह है जबकि शिवसंबंधी स्तोत्रों की संख्या मात्र ग्यारह है। इसी प्रकार बहुत से शैवतत्त्वों का अभाव हम बंगाली तथा दक्षिण भारतीय संस्करणों में पाते हैं। अत: विद्वानों की राय में यह वैष्णव पुराण है। परन्तु स्कन्द पुराण की शंकर संहिता के 'शिवरहस्यखण्ड' के अनुसार यह पुराण शिवमहिमा का वाचक है। नारद, मत्स्य और स्कन्द पुराणों के अनुसार इसमें कूर्म कल्प की कथाएँ हैं (नारद पु. पू. भा./105/1-2; मत्स्य पु. 53/44-45; स्कन्द पु. 7/1/2/63-64)।

भगवान् शिव का स्वरूप

अन्य पुराणों की तरह इस पुराण में भी भगवान् शिव को परमतत्त्व माना गया है। वही परम तत्त्व निर्गुणरूप को त्यागकर ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्ररूप धारणकर जगत् की सृष्टि, पालन एवं संहार करता है। इस पुराण में हम परमतत्त्व या परब्रह्म के दोनों रूपों का वर्णन मिला-जुला एक साथ ही पाते हैं। परमतत्त्व सदाशिव अपनी शक्ति (या माया) का आश्रय लेकर सगुण एवं साकाररूप धारण करता है। फलस्वरूप उस एक तत्त्व के अनेक दिव्य एवं अदिव्य रूपों का निर्माण होता है। निर्गुणरूप में शिव जगत् के परमकारण, अव्यक्त, अप्रमेय, मृत्युञ्जय, सच्चिदानन्दस्वरूप, ॐकारस्वरूप, गुणातीत, निरञ्जन आदि विशेषणों से युक्त हैं। सगुणरूप में भगवान् शिव जगत्स्वरूप, सृष्टिकर्त्ता (ब्रह्मा),

1. प्रस्तुत लेख, सर्वभारतीयकाशिराजन्यास, दुर्ग रामनगर वाराणसी द्वारा 1968 ई. में प्रकाशित 'श्रीवामनपुराणम्', जो आनंद स्वरूप गुप्त द्वारा संपादित है, पर आधारित है।

धर्त्ता एवं हर्त्ता(विष्णु एवं रुद्ररूप) आदि विशेषणों से युक्त हैं। यहाँपर हम इस पुराण से ऐसे उद्धरणों को प्रस्तुत करने जा रहे हैं जो शिवतत्त्व के सगुण एवं निर्गुण दोनों रूपों को स्पष्ट करते हों तथा उसे परमतत्त्व या ब्रह्म सिद्ध करते हों।

भगवान् शिव एक स्थलपर लोकपति, धनाध्यक्ष, महेश्वर, ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, वरिष्ठ तथा सबके आदि कहे गये हैं(वाम. पु. 2/16, 17)। मंकणक मुनि ने भगवान् शिव की स्तुति में उन्हें चराचर से श्रेष्ठ, आदिदेव, सभी देवों के आधार तथा जिनके संरक्षण में भयरहित हो देवगण आनंदपूर्वक जीवन यापन करते हैं-ऐसा कहा है।

नान्यं देवादहं मन्ये शूलपाणेर्महात्मनः।
चराचरस्य जगतो वरस्त्वमसि शूलधृक्।।
त्वदाश्रयाश्च दृश्यन्ते सुरा ब्रह्मादयोऽनघ।
पूर्वस्त्वमसि देवानां कर्त्ता कारयिता महत्।।
त्वत्प्रसादात् सुराः सर्वे मोदन्ते ह्यकुतोभयाः। (वाम. पु., सरोमाहात्म्य 17/17-19)

भगवान् शिव सबके स्वामी, वरदाता तथा परम पवित्र हैं(वाम. पु., सरोमाहात्म्य 22/16)। ब्रह्माजी ने भगवान् शिव की स्तुति में उन्हें अनन्त, वरदाता, पिनाकी, महादेव, स्थाणु, परमात्मा, भुवनों के स्वामी, तारक, ज्ञानदाता देव, पुरुषोत्तम, शान्तिस्वरूप, सम्पूर्ण विश्व के स्वामी, देवाताओं के नायक, शूलपाणी तथा विश्वभावन (विश्व का जन्मदाता) कहा है।

अनन्ताय नमस्तुभ्यं वरदाय पिनाकिने।
महादेवाय देवाय स्थाणवे परमात्मने।।
नमोऽस्तु भुवनेशाय तुभ्यं तारक सर्वदा।
ज्ञानानां दायको देवस्त्वमेकः पुरुषोत्तमः।।
...।
घोर शान्तिस्वरूपाय................................।।
नमस्ते देव विश्वेश नमस्ते सुरनायक।
शूलपाणे नमस्तेऽस्तु नमस्ते विश्वभावन।। (वाम. पु., स. मा. 23/5-8)

किसी प्रसंग में ब्रह्मजी ने भगवान् शिव की स्तुति करते हुए उन्हें महादेव, भूत-भव्य, भवाश्रय, त्रैलोक्यपालिन, पवित्रदेह, सभी पापों को दूर करनेवाले, चराचरगुरु, परम गोपनीय तथा जो गुह्य पदार्थ हैं उनको प्रकाश में लानेवाले, वैद्यों द्वारा दूर न होनेवाले रोगों को भी दूर करनेवाले, शोकों से रहित, जिनका नाम जपनेवाला भव-सागर में नहीं पड़ता, नित्यनित्य, त्रैलोक्यपालक, अप्रमेय, पर, अपरिमेय, समस्त भूतों के प्रिय, योगेश्वर, सब पापों के क्षय करनेवाले, विश्वरूप तथा शेषनाग को हार के रूप में धारण करनेवाले इत्यादि कहा है।

नमस्तेऽस्तु महादेव भूतभव्य भवाश्रय।

नमस्ते स्तुतिनित्याय नमस्त्रैलोक्यपालिने।।
नमः पवित्रदेहाय सर्वकल्मषनाशिने।
चराचरगुरो गुह्यगुह्यानां च प्रकाशकृत्।।

....

त्वन्नामजापिनो देव न भवन्ति भवाश्रयाः।।

....

योगेश्वराय देवाय सर्वपापक्षयाय च।।

....

भूतसंसारदुर्गाय विश्वरूपाय ते नमः।।

....

फणीन्द्रवरहाराय भास्कराय नमो नमः।। (वाम. पु., सरोमाहात्म्य 28/11-18)

देवता एवं ऋषियों ने एक स्थलपर भगवान् शिव की स्तुति में उन्हें परमात्मा, अनन्तयोनि, लोकसाक्षी, परमेष्ठि, भगवान्, क्षेत्रज्ञ, परावरज्ञ(गत और अनागत को जाननेवाला), ज्ञानज्ञेय, सर्वेश्वर, महाविरंचि, महाविभूति, महाक्षेत्रज्ञ, सर्वभूतावास, आदिदेव, महादेव, सदाशिव, ईशान, दुर्विज्ञेय, महाभूतेश्वर, परमेश्वर, महायोगेश्वर, त्र्यम्बक, परब्रह्म, परमज्योति, ॐकार, वषट्कार, परमकारण, सर्वगत, सर्वशक्तिमान्, सर्वदेव, अजन्मा, अग्निसोमात्मक, पवित्र, महामायाधर, कामहन, परमहंस, संहारकर्त्ता, सुर-सिद्ध द्वारा अर्चित, सर्वलोकवरप्रद, अनुग्रह करनेवाले, सर्वयज्ञमय, भक्तों पर दया करनेवाले, त्रिलोचन, जटाधर, नीलकण्ठ, चन्द्रार्द्धधर, उमाशरीरार्द्धधर, गजचर्मधर तथा भक्तवत्सल आदि कहा है।

नमस्ते परमात्मन् अनन्तयोने लोकसाक्षिन्
परमेष्ठिन् भगवन् सर्वज्ञ क्षेत्रज्ञ परावरज्ञ
ज्ञानज्ञेय सर्वेश्वर महाविरिञ्चि महाविभूते
महाक्षेत्रज्ञ महापुरुष सर्वभूतावास
मनोनिवास आदिदेव महादेव सदाशिव
ईशान दुर्विज्ञेय ....महाभूतेश्वर
परमेश्वर महायोगेश्वर त्र्यम्बक महायोगिन्
परब्रह्मन् परमज्योतिः ब्रह्मविदुत्तम ॐकार
वषट्कार .... परमकारण
सर्वगत सर्वदर्शिन् सर्वशक्ते सर्वदेव अज

....

पवित्र ....महामायाधर .... महेश्वर

.... सर्वलोकवरप्रद सर्वानुग्रहकर
.... सर्वयज्ञमय ....
त्रिलोचन जटाधर नीलकण्ठ चन्द्रार्धधर
उमाशरीरार्धहर गजचर्मधर ....।। (वाम. पु., सरोमाहात्म्य 23/36)

इस पुराण (स. मा. 26/62-162) में वेन ने स्थाणु (भगवान शिव) देव की स्तुति सहस्त्र नामों द्वारा की है। इस स्तुति में वह भगवान् शिव के सैकड़ों विशेषणों का प्रयोग करता है। ये विशेषण भगवान् शिव को अपर एवं परब्रह्म या परमतत्त्व सिद्ध करते हैं। अर्थात् इस स्तुति में भगवान् शिव के सगुण एवं निर्गुण दोनों रूपों की झलक मिलती है।

यहाँपर भगवान् शिव को ईशान, अजन्मा, चन्द्रमा को धारण करनेवाले, महादेव, जगत्पति, देवदैत्यपूजित, त्र्यक्ष, सभी दिशाओं में हाथ, पैर, कान तथा मुखवाला, समस्त जगत् को आवृत्त करनेवाला, ब्रह्मा, विष्णु, अग्नि, वरुण तथा सूर्यस्वरूप, कार्य, कारण, क्रिया, प्रभव एवं प्रलय, सत् एवं असत्स्वरूप, पशुपति, धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षदाता, कैवल्यरूप, पापों का नाश करनेवाले, सब कुछ प्रदान करनेवाले, महासत्त्व (निरपेक्ष सत्), महाकाल, अखिल ब्रह्माण्ड के कर्त्ता, पालन एवं संहारकर्त्ता, ब्रह्म, ऋक्, यजु: एवं सामवेदस्वरूप, वेदों एवं उपनिषदों द्वारा स्तुत्य, आदि, अन्त, वेदों की गायत्री तथा प्रणव, भूतात्मा, जगन्नाथ, ब्रह्मा, गोविन्द और ऋषियों द्वारा अगम्य तथा भक्तवत्सल आदि कहा गया है। (वाम. पु., सरोमाहात्म्य 26/62-162)

वेनकृत सहस्त्रनाम के एकाध श्लोकों को देखें-

स्रष्टा चराचरस्यास्य पाता हन्ता तथैव च।
त्वामाहुर्ब्रह्म विद्वांसो ब्रह्म ब्रह्मविदां गतिम्।। (वाम. पु., स. मा. 26/107)
न ब्रह्मा न च गोविन्द: पौराणा ऋषयो न ते।
माहात्म्यं वेदितुं शक्ता याथातथ्येन शंकर।। (वाम. पु., स. मा. 26/146)

अर्थात्-ब्रह्मज्ञानी लोग आपको ही चराचर जगत् का सर्जक, पालक, संहारक, ब्रह्म तथा ब्रह्मवादियों की परमगति कहते हैं। हे शंकर! आपके माहात्म्य को यथातथ्य रूप से न तो ब्रह्मा, गोविन्द और न ही पुराणों के ज्ञाता ऋषिगण ही जान सकते हैं।

अंगिरस भगवान् शिव के विवाह का प्रस्ताव लेकर जब हिमवान् के पास जाते हैं तो उस समय वे शिव की विशेषता बताते हुए उन्हें सर्वात्मा, त्रिशूलधारी, त्रिनेत्रधारी, वृषवाहन, यज्ञभोक्ता, प्रभु, ईश्वर, शिव, हर, पशुपति आदि कहा है। (वाम. पु., स. मा. 26/34-36)

एक अन्य स्थलपर भगवान् शिव को त्रिशूलधारी, पिनाकी, मृगचर्मधारी, कालशत्रु तथा हार एवं कुण्डल के रूप में नागराजों को पहननेवाला कहा गया है। (वाम. पु. 27/31-32)

अंधकासुर से युद्ध के दौरान भगवान् शिव ने दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य को निगल लिया था। उस समय शम्भु के उदर में शुक्राचार्य ने शिव की स्तुति करते हुए उन्हें वरदाता, गुणों के धाम, लोकनाथ,

कालशत्रु, विश्वरूप, ईश्वर, श्मशानवासी, भस्मधारी तथा पशुपति आदि कहा है।(वाम. पु. 43/29-32)

अन्धकासुर ने, जो पिछले जन्म में राजा वेन था, शिव के त्रिशूलपर लटके-लटके सूख जाने तदनन्तर ज्ञान होनेपर, भगवान् शिव की स्तुति की। इस स्तुति में भगवान् शिव को उसने तीनों लोकों की रक्षा करनेवाला, दस भुजाओंवाला, शेषनाग का हार पहननेवाला, सर्वेश्वर, विश्वरूप, सुरासुरवन्दित, भूतों के स्वामी, त्रिदेवस्वरूप, त्रिवेदस्वरूप, अव्यय, वेदों के छः अंगों के ज्ञाता, कर्त्ता, धाता, मंगलमूर्ति, ओंकारस्वरूप, ईशान, ध्रुव, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, वषट्कार, धर्म, सुरश्रेष्ठ, सूक्ष्म, व्यक्तरूप, अव्यक्तरूप, ईश्वर, स्थावर-जंगम सभी में व्याप्त, आदि, अन्त एवं मध्य, अनादि, अनन्त, सर्वव्यापी, पशुपति तथा जितक्रोध कहा है।(वाम. पु. 44/52-66)

अन्धाकासुर की स्तुति के कुछ अंशों को देखें-

त्वं कर्त्ता चैव धाता च त्वं जयस्त्वं महाजयः।
त्वं मङ्गल्यस्त्वमोंकारस्त्वमीशानो ध्रुवोऽव्ययः।।
त्वं ब्रह्मा सृष्टिकृन्नाथस्त्वं विष्णुस्त्वं महेश्वरः।
त्वमिन्द्रस्त्वं वषट्कारो धर्मस्त्वं च सुरोत्तमः।।
सूक्ष्मस्त्वं व्यक्तरूपस्त्वं त्वमव्यक्तस्त्वमीश्वरः।
त्वया सर्वमिदं व्याप्तं जगत् स्थावरजङ्गमम्।। (वाम. पु. 44/61-63)

अर्थात्-आप ही कर्त्ता, पालनकर्त्ता, जय तथा महाजय हैं। आप ही मंगलमूर्ति, ओंकार, सबके स्वामी, ध्रुव एवं अव्यय हैं। आप ही ब्रह्मा, सृष्टिकर्त्ता, विष्णु, महेश्वर, इन्द्र, वषट्कार, धर्म एवं सुरश्रेष्ठ हैं। आप ही सूक्ष्म, व्यक्त एवं अव्यक्तरूप तथा ईश्वर हैं। आप ही जगत् के समस्त स्थावर-जंगम में व्याप्त हैं।

उपरोक्त उद्धरणों को देखने से यह स्पष्ट है कि भगवान् शिव जगत् के मूलतत्त्व अथवा परमब्रह्म हैं। वे ही सगुणरूप धारणकर ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, इन्द्र आदि कहलाते हैं। रुद्ररूप में स्वयं भगवान् शिव अपने पूर्ण अंश में अवतरित हो सती तथा पार्वती से विवाहकर नाना प्रकार की लीलाएँ करते हैं। वे सदाशिव, जो निर्गुण हैं, सगुण रुद्ररूप धारण करनेपर त्रिनेत्रधारी, बाघाम्बरधारी, चन्द्रमा को मुकुट में धारण करनेवाले, जटाजूट धारण करनेवाले, दस भुजावाले, त्रिशूल एवं पिनाक धारण करनेवाले, शेषनाग को गले में हार के रूप में धारण करनेवाले तथा कैलासवासी कहलाते हैं।

शिवोपासना

भगवान् शिव की उपासना से भोग एवं मोक्ष दोनों की प्राप्ति होती है। भगवान् शिव को एक स्थलपर धनाध्यक्ष(2/16-17), अन्य स्थलोंपर वरदाता(वाम. पु. स. मा. 22/16, 23/5 इत्यादि), कहींपर देवताओं की प्रसन्नता का कारण उनकी कृपा(स. मा. 17/19), कहींपर उन्हें तारक(स. मा. 23/6, 28/14), कहींपर ज्ञानदाता(स. मा. 23/6), कहींपर पापों को दूर करनेवाला(स. मा.

28/12, 16), और कहींपर उन्हें वैद्यों द्वारा ठीक न होनेवाले रोगों को भी दूर करनेवाला(स. मा. 28/13) कहा गया है। इन सभी उद्धरणों की चर्चा पहले भी हो चुकी है, अतः उनका पुनः उल्लेख करना अनावश्यक है। उपरोक्त सभी विशेषताओं से युक्त होने के कारण ही भगवान् शिव को भोग एवं मोक्षदाता कहा जाता है। पुनः उनको कल्याणस्वरूप तथा आशुतोष या शीघ्र प्रसन्न होनेवाला कहा जाता है। इन सब विशेषताओं के कारण ही शिवोपासना सुगम, श्रेष्ठतर एवं वरणीय है।

भगवान् शिव की उपासना से देव-दानव-मानव आदि सभी ने अपने मनोवांछित फल प्राप्त किये हैं। उदाहरण के लिये रावण(वाम. पु. स. मा. 25/15), तक्षक(स. मा. 25/3), विभीषण(स. मा. 25/20), खर, दूषण एवं त्रिशिरा(स. मा. 25/22-23), हारित, वापित, मृकंडु, आदित्य, चित्रांगद, रम्भा आदि(स. मा. 25/26-27, 31-33 आदि), इन्द्र, पराशर, व्यास, वायु, कार्तवीर्य, हनुमान्, मित्र, वरुण और विष्णु आदि(स. मा. 25/36-45) तथा ब्रह्मा(स. मा. 28/21)।

(1) लिंगपूजा का महत्त्व

ऊपर के(गद्यांस में) दिये गये उद्धरणों में जिन-जिन लोगों का उल्लेख है वे सभी लिंगोपासना द्वारा ही भगवान् शिव को प्रसन्न कर वरदान पाये हैं। इन उद्धरणों के अतिरिक्त भी ऐसे अनेक स्थल हैं जिनमें लिंगोपासना का उल्लेख है। भगवान् शिव की पूजा मुख्यतः लिंगपूजा ही है। 'सरोमाहात्म्य' खण्ड के 28 अध्यायों में अनेक शिवलिंगों की स्थापना का प्रसंग फैला हुआ है। ये शिवलिंग देव, दानव, मानव, राक्षस, नाग, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर तथा अप्सरा आदि द्वारा स्थापित तथा पूजित हैं। लिंगपूजा से ब्रह्माजी ने अपनी पुत्री के प्रति उत्पन्न वासना के पाप से मुक्ति पायी(वा. पु. स. मा. 28/21), विष्णु भगवान् को सुदर्शन चक्र की प्राप्ति हुई(स. मा. 25/43 तथा वाम. पु. 56/20-21) तथा शुक्राचार्य को संजीवनीविद्या प्राप्त हुई(वाम. पु. 36/43)।

दारुवन में लिंग के पतनोपरान्त ऋषियों तथा देवों की प्रार्थनापर भगवान् शिव प्रसन्न होकर लिंगोपासना की महिमा बताते हुए कहते हैं कि "जो लोग भक्ति की भावना का आश्रय ग्रहणकर मेरे लिंग का पूजन करेंगे उनको कभी भी कुछ दुर्लभ नहीं होगा। चेतनरूप से किये हुए पापों से भी लिंगपूजा द्वारा शुद्धि हो जाती है, इसमें किसी बात का संदेह नहीं है।"

ये लिङ्गं पूजयिष्यन्ति मामकं भक्तिमाश्रिताः।
न तेषां दुर्लभं किंचिद् भविष्यति कदाचन।।
सर्वेषामेव पापानां कृतानामपि जानता।
शुद्ध्यते लिङ्गपूजायां नात्र कार्या विचारणा।। (वाम. पु. सरोमा. 23/11-12)

वामन पुराण में दारुवन में लिंगपतन संबंधी दो तरह की कथाएँ हैं। दूसरी कथा का वर्णन छठे अध्याय में है। वहाँपर स्वयं भगवान् विष्णु ने देवताओं तथा चारों वर्णों के लोगों को लिंगपूजा का विधान किया है।(वाम. पु. 6/85-86)

ततश्चकार भगवांश्चातुर्वर्ण्यं हरार्चने। (वाम. पु. 6/86)

(2) शैवतीर्थ

इस पुराण में कुरूक्षेत्र एवं पृथुदक स्थित तीर्थों का बड़े विस्तार से वर्णन किया गया है। कुरुक्षेत्र के अन्तर्गत आनेवाले सैकड़ों तीर्थों संबंधी कथाएँ तथा उनके माहात्म्य का वर्णन किया गया है। सरो माहात्म्य के 28 अध्यायों में कुरुक्षेत्र से संबंधित तीर्थों का वर्णन विस्तार के साथ किया गया है। उदाहरण के लिये ब्रह्मसर, सन्निहित, सरस्वती, स्थाणु, रामह्रद, कुरुजांगल तथा पृथुदक आदि।

स्थाणु तीर्थ की महिमा बताते हुए इसके इर्द-गिर्द स्थापित अनेक लिंगों की भी चर्चा की गयी है। स्थाणुवट तथा शिवलिंग, जो वहाँ आस-पास में स्थापित हैं, उनके दर्शनमात्र से मुक्ति प्राप्त हो जाती है (वाम. पु. स. मा. 22/7-8)। सन्निहित तीर्थ को पवित्रतम बताते हुए कहा गया है कि यहाँ स्थापित लिंग के दर्शनकर तीनों वर्णों के लोग मुक्त हो जाते हैं (स. मा. 24/2-3)। स्थाणु एवं सन्निहित तीर्थों के आस-पास करोड़ों की संख्या में शिवलिंग ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्रादि देवों, अनेक दानवों एवं असुरों, नागों, किन्नर एवं अप्सराओं आदि द्वारा स्थापित किये गये हैं (स. मा. 25/48-50)। केदार तीर्थ की महत्ता का वर्णन 34 वें अध्याय में किया गया है (वाम. पु. 34/11-13)।

(3) शतरुद्रिय तथा शिवनाममहिमा

शिवोपासना में शतरुद्रिय की महिमा से सभी लोग परिचित हैं। इसके बिना रुद्राभिषेक आदि कर्म संभव नहीं है। यजुर्वेद में निहित यह रुद्राध्याय वैदिक काल से ही शिवमहिमा का द्योतक रहा है। भगवान् शिव की प्रसन्नता को प्राप्त करने के लिये इसका प्रयोग अनेक प्रकार से किया जाता है। शतरुद्रिय की महत्ता का उल्लेख इस पुराण में भी पाया जाता है।

उदाहरण के लिये वेन अपनी स्तुति में भगवान् शिव का यजुर्वेद के शतरुद्रिय से तादात्म्य करता है। अर्थात् शतरूद्रिय शिवस्वरूप का ही बोधक है (वाम. पु. स. मा. 26/121)। पुनः दक्षयज्ञविध्वंस के समय जब अनेक प्रमुख देवता डरकर भाग गये तब ऋषियों ने भगवान् शिव को प्रसन्न करने के लिये शतरुद्रिय का पाठ शुरू कर दिया (वाम. पु. 5/6)। विपत्ति के समय अथवा रुद्र के कोप से बचने के लिये अथवा उन्हें प्रसन्न करने के लिये उस समय ऋषियों के पास शतरुद्रिय के जप से बेहतर कोई अन्य उपाय नहीं दीख पड़ा। अतः इससे शतरुद्रिय की महत्ता स्पष्ट हो जाती है।

भगवान् शिव के नाम की अनन्त महिमा है। अन्य पुराणों की भाँति इस पुराण में भी स्पष्टरूप से भगवान् के नाम-जप की महिमा का बखान किया गया है। कहा गया है कि शिव के नाम का जप करने से आदमी भवसागर से पार हो जाता है। ब्रह्माजी भगवान् शिव की स्तुति करते हुए एक स्थल पर कहते हैं कि-

त्वन्नामजापिनो देव न भवन्ति भवाश्रयाः॥ (वाम. पु. स. मा. 28/14)

भावार्थ है कि "आपका नाम जपनेवाला संसार-चक्र से छूट जाता है।"

(4) वेनकृत शिवसहस्रनाम

यों तो भगवान् शिव के सभी नाम समानरूप से भवसागर को पार कर सकते हैं पर हजार नामों का समूह-विशेष(जिसे सहस्रनाम कहा जाता है) एक प्रमुख महत्त्व रखता है। भगवान् शिव के अनन्त नामों में से चुने हुए विशिष्ट नाम-समूहों से निर्मित अनेक प्रकार के सहस्रनाम हम अलग-अलग पुराणों वा ग्रन्थों में पाते हैं। इस पुराण में वेनकृत सहस्रनाम की महिमा बताते हुए कहा गया है कि जो कोई भी इसका पाठ करता है अथवा उसे श्रवण करता है उसके सभी पाप एवं अशुभ दूर हो जाते हैं तथा वह दीर्घायु प्राप्त करता है।

जिस तरह सब देवों में भगवान् शिव विशिष्ट हैं उसी प्रकार वेननिर्मित यह स्तोत्र भी अन्यों से श्रेष्ठ है।

यथा सर्वेषु देवेषु विशिष्टो भगवाञ्छिवः।।
तथा स्तवो वरिष्ठोऽयं स्तवानां वेननिर्मितः। (वाम. पु. स. मा. 27/8-9)

इस स्तोत्र से पुरुष को यश, राज्य, सुख, ऐश्वर्य, धन, मान आदि की प्राप्ति हो सकती है बशर्ते इसका पाठ भक्तिभाव से करे। विद्याप्राप्ति, राज-भय से मुक्ति, गणों की श्रेष्ठता, तेज, यश तथा शुद्धि के लिये, राक्षस तथा पिशाच, भूत आदि के विघ्न से मुक्ति के लिये समाहित चित्त से इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिये। संक्षेप में सभी पापों की मुक्ति तथा सर्वत्र सफलता के लिये इस स्तोत्र का मनोयोगपूर्वक पाठ करना चाहिये।

तथा स्तवमिमं श्रुत्वा मुच्यते सर्वपातकैः।। (वाम. पु. स. मा. 27/22)

अर्थात्-इस स्तव के सुनने से सभी प्रकार के पापों से मुक्ति मिल जाती है।

वेनकृत यह सहस्रनाम(वा. पु. सरोमा. 26/62-162) महाभारत (शन्तिपर्व-मोक्षधर्मपर्व/284/69-180), ब्रह्म पु. (40/2-100) तथा वायु पु. (1/30/180-284) में वर्णित दक्ष प्रजापतिकृत सहस्रनाम से काफी साम्य रखता है।

भगवान् शिव एवं विष्णु

इस पुराण में भी भगवान् विष्णु एवं शिव की तात्त्विक एकता को स्पष्टरूप से अनेक स्थलों पर बताया गया है। एकता प्रतिपादित करनेवाले एकाध प्रसंगों की चर्चा यहाँ की जायगी।

अंधकासुर से युद्ध की तैयारी के लिये भगवान् शिव ने नंदी के माध्यम से अपने सभी गणाध्यक्षों को सेना समेत बुलवाया। नंदी के बुलाने पर रुद्रगण, स्कन्दगण, शाखगण, विशाखगण, प्रमथगण, शैवगण, पाशुपतगण, कालमुखगण, निराश्रयगण अथवा महापाशुपतगण इत्यादि करोड़ों की संख्या में उपस्थित हुए। महापाशुपत गणों को देखकर भगवान् शिव खड़े हो गये तथा उनके सेनापति का आलिंगन किया। अन्य गणाध्यक्षों से भिन्न महापाशुपतों के अध्यक्ष का विशेष सम्मान देखकर नंदी ने भगवान् शिव से इसका कारण पूछा। कारण बताते हुए भगवान् शिव कहते हैं कि हर की पूजा तुममें

से उसी के द्वारा हो सकती है जिनमें भक्ति-भाव हो। जिनके हृदय में अंहकाररूपी अज्ञान है वे विष्णु के चरणों की (अथवा उनकी भक्ति की) निन्दा करते हैं। इसी अज्ञान की वजह से हमारे एवं विष्णु में तुम लोग भेद करते हो (जबकि महापाशुपत ऐसा नहीं करते)।

वास्तव में जो कुछ मैं हूँ वही भगवान् विष्णु हैं, और जो विष्णु हैं वही अव्यय तत्त्व मैं हूँ। हम दोनों में कोई भेद नहीं है। एक ही मूर्ति दो रूपों में विभक्त होकर स्थित है।

योऽहं स भगवान् विष्णुर्विष्णुर्यः सोऽहमव्ययः।।
नावयोर्वै विशेषोऽस्ति एका मूर्तिर्द्विधा स्थिता। (वाम. पु. 41/27-28)

आगे भगवान् शिव कहते हैं कि महापाशुपतों के अलावा इस तथ्य का ज्ञान अन्य किसी गण को नहीं है। चूँकि तुम लोगों ने हमारी सदैव निन्दा की है (क्योंकि विष्णु की निन्दा मेरी ही निन्दा है), इसलिये तुम्हारा ज्ञान नष्ट हो गया है। इसी कारण से महापशुपतों के अलावे अन्य गणाध्यक्षों का आलिंगन नहीं किया गया।

इस उत्तर को सुनने के पश्चात् गणों ने महेश्वर से पूछा कि आप किस प्रकार जनार्दन से एक रूप हैं? क्योंकि आप निर्मल, शुद्ध, शान्त, श्वेत एवं निरंजन हैं जबकि जनार्दन कृष्ण वर्ण के? (अर्थात् श्वेत और कृष्ण परस्पर विरुद्ध गुणों का कैसे मेल हो सकता है)। इस प्रश्न के उत्तर में वे कहते हैं कि कमलनेत्र जगन्नाथ जो मेरे में ओत-प्रोत हैं तथा तुम लोग जिनकी निन्दा करते हो, वे भी सर्वव्यापी भगवान् शर्व हैं जो गणों पर शासन करते हैं। उनके सदृश इस चराचर जगत् में कोई नहीं है। वे भगवान् श्वेत वर्ण, पीत वर्ण, रक्त वर्ण या कृष्ण वर्ण के हैं। उनसे परे कोई धर्म नहीं है। वे सभी द्वारा पूज्य भगवान् सदाशिव हैं जिनमें सत्त्व, रजस्, तमस् और उनके मिश्रित गुण विद्यमान हैं।

दूसरे शब्दों में जो सदाशिव परमतत्त्व है, वही अपने को विष्णु तथा रुद्र आदि रूपों में व्यक्त करता है। सदाशिव सत्त्व, रज, तम आदि गुणों के आधार हैं तथा इन गुणों के माध्यम से ही वे सृष्टि करते हैं।

भगवान् शिव रुद्रगणों को यह भी संकेत करते हैं कि जो मेरे और विष्णु में भेद करता है वह घोर नरक को जाता है। उपरोक्त उत्तर सुनने के पश्चात् गणों ने भगवान् शिव को हरिहररूप में देखा। इस रूप में विष्णु एवं रुद्र दोनों के आकार, आयुध एवं वाहन एक साथ दीखे। इसके उपरान्त गणों ने देखा कि रुद्रदेव ने इन्द्र का रूप धारण कर लिया। पुनः अगले क्षण सूर्य का, तदतन्तर विष्णु एवं ब्रह्मा का। इस प्रकार की लीला को देखवकर शिवगणों ने ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं सूर्य में एकता का बोध किया। एकता का बोध करते ही वे सभी गण पाप से मुक्त हो गये।

क्षणाद् भवति रुद्रेन्द्रः क्षणाच्छंभुः प्रभाकरः।।
क्षणार्द्धाच्छंकरो विष्णुः क्षणाच्छर्वः पितामहः।

ततस्तदद्भुततमं दृष्ट्वा शैवादयो गणाः।।
अजानन्त तदैक्येन ब्रह्मविष्ण्वीशभास्करान्।
यदाऽभिन्नममन्यन्त देवदेवं सदाशिवम्।।
तदा निर्धूतपापास्ते समजायन्त पार्षदाः। (वाम. पु. 41/51-54)

भगवान् शिव के हरिहररूप अथवा शिव एवं विष्णु की एकता के प्रसंग का अन्य उदाहरण हमें इस पुराण के अध्याय 36 में मिलता है। विस्तारभय से उनकी चर्चा यहाँ नहीं की जायगी।

वामन पुराण में शिवसंबंधी प्रचलित कथाओं का रूप

पुराणों में एक ही कथा के भिन्न-भिन्न रूप मिलते हैं। परन्तु आमतौर पर उन सभी रूपों में काफी समानता होती है। वामन पुराण में पायी जानेवाली शिवसंबंधी प्रचलित अनेक कथाओं के रूप में काफी अंतर पाया जाता है। अतः भगवान् शिव की विभिन्न कल्पों में की जानेवाली लीलाओं की विचित्रता की झलक प्राप्त करने के लिये ही हम यहाँ कुछ कथाओं का उल्लेख कर रहे हैं।

(1) दक्षयज्ञ और सती की कथा

वामन पुराणकी जिन कथाओं में अन्य पुराणों से पृथक्ता पायी जाती है उसमें सबसे अधिक ध्यान आकर्षित करनेवाली कथा सती के देहत्याग की है। शिव पुराण, रामायण तथा अन्य पुराण-ग्रन्थों में हम यही पढ़ते आये हैं कि शिव-पत्नी सती निमन्त्रण न आनेपर भी अपने पिता दक्ष के यज्ञ में गयीं थीं और जब उन्होंने वहाँ शिव का भाग न देखा तो वह वहाँ उपस्थित सभी लोगों को अभिशाप देती हुईं जलकर भस्म हो गयीं। भस्म होने का समाचार सुनकर शिवजी ने वीरभद्र को भेजा, जो दक्ष के यहाँ पहुँचकर उनके यज्ञ को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया।

पर वामन पुराण में यह कथानक दूसरे ही रूप में दिया गया है। इस कथा का वर्णन करते हुए चतुर्थ अध्याय में कहा गया है कि-

"गौतम नन्दिनी जया सती देवी के दर्शन करने मन्दराचल पर गयीं। उसे अकेली आया देखकर सती ने पूछा कि उसकी बहनें विजया, जयन्ती और अपराजिता क्यों नहीं आयीं? जया ने उत्तर दिया कि वे पिताजी के साथ नानाजी के यज्ञ में गयीं हैं। मैं भी वहीं जा रही थी, पर अपका दर्शन करने इधर चली आई। क्या आप वहाँ नहीं चल रही हैं? तथा क्या देव महेश्वर भी वहाँ नहीं जा रहे हैं? सभी ऋषिगण तथा ऋषिपत्नियाँ वहाँ गयीं हैं तथा सभी देवगण भी गये हैं। क्या नानाजी ने आपको आमन्त्रित नहीं किया है?"

अपने पति की इस प्रकार अवज्ञा होते देखकर, और वह भी अपने पिता के ही द्वारा, सती को इतना शोक और क्रोध हुआ कि उन्होंने उसी समय भूमिपर गिरकर प्राण छोड़ दिया। इसके पश्चात् जया का रुदन सुनकर भगवान् शंकर आये और इस प्रकार सती का निधन देखकर बड़े क्रोधित हुए। उन्होंने उसी समय गणों का एक बहुत बड़ा दल तैयार करके वीरभद्र की अधीनता में उसे दक्षयज्ञ में भेजा और घोर युद्ध करके उसे नष्ट करा दिया।

(2) काम–दहन की कथा

इसी प्रकार 'काम–दहन' की कथा में भी सर्वथा नयी बातें कही गयीं हैं। सामान्यरूप से इस कथा में कहा गया है कि जब तारकासुर ने देवताओं को पराजित कर दिया और उनको जब यह मालूम हुआ कि शंकर भगवान् के पुत्र के अतिरिक्त और कोई उसे नहीं मार सकेगा, तो इन्द्र ने कामदेव को शिवजी के पास भेजा जिससे वह उनके मन को चलायमान करके पार्वती के साथ विवाह करने को प्रेरित कर सके। पर जब वह शिवजीपर अपने बाण चलाने लगा तो उन्होंने क्रोधित होकर तीसरे नेत्र से उसे भस्म कर दिया।

पर वामन पुराण के छठे अध्याय में कहा गया है कि दक्षयज्ञविध्वंस के पश्चात् भगवान् शंकर को विचरते देख कामदेव ने उनपर 'उन्माद', 'संताप' तथा 'विजृम्भण' नामक बाणों को चलाया जिससे वे विक्षिप्त हो सती की याद में अत्यन्त व्यथित हो गये। अति दु:खित होनेपर उन्होंने उन तीनों बाणों को कुबेर के पुत्र पांचालिक को दे दिया। जब कामदेव पुन: उनपर प्रहार करने को प्रस्तुत हुआ तो वे देवदार के जंगलों में भाग खड़े हुए।[1] उस वन में ऋषियों की पत्नियाँ उनको देखकर मोहित हो उनके पीछे चलने लगीं। इसपर ऋषियों ने उनको शाप दिया कि तुम्हारा लिंग गिर जाय। जब वह लिंग गिरा तो आकाश से पातालतक व्याप्त हो गया। ब्रह्मा और विष्णु दोनों उस स्थानपर आये और क्रमश: ऊपर तथा नीचे की ओर जाकर उस लिंग का आदि–अन्त देखने का प्रयत्न करने लगे। पर जब कहीं उसका आदि–अन्त नहीं मिला तो दोनों मिलकर शिवजी की स्तुति करने लगे। उससे सन्तुष्ट होकर

---

1. भगवान् शिव का इस प्रकार भागना उनकी लीला ही है अन्यथा वे उसे पहले ही बार में भस्म कर सकते थे जबकि उन्होंने तीसरी बार प्रहार करते वक्त जलाया। इस प्रकार की लीला के अनेक रहस्य हो सकते हैं। उदाहरण के लिये अगर कामदेव को वे पहली बार में ही जला डालते तो उसे ब्रह्मा द्वारा प्राप्त सबको मोहनेवाली मिली शक्ति(जिससे वे एक बार खुद अपनी कन्या के प्रति आसक्त हो गये थे, शिव पुराण, रु. स. स. ख. अ. 3) की गरिमा का पता नहीं चलता। अत: लोकशिक्षा के लिये कि कामदेव ब्रह्मा द्वारा प्राप्त मोहन आदि शक्तियों के कारण सभी देव–दानव आदि के लिये अजेय धनुर्धर है, जिनके पुष्पबाणों से बचना असंभव सा है, भगवान् शिव ने ऐसा व्यवहार किया। शिव पुराण(रुद्र संहिता/सती खण्ड/अध्याय 2) में कथा आती है कि ब्रह्माजी कामदेव की सृष्टिकर उसे आशीर्वाद दिया कि "तुम्हारे सम्मुख त्रिलोकी में कोई भी जीव या देवता न ठहर सकेगा। मैं और वासुदेव और शिवजी भी तुम्हारे वश होवेंगे और जीवों की तो बात ही क्या है।"

अहं वा वासुदेवो वा स्थाणुर्वा पुरुषोत्तमः।
भविष्यामस्तव वशे किमन्ये प्राणधारकाः।। (शि. पु. रु. सं. स. ख. 2/39)

इस वरदान की परीक्षा के लिये कामदेव ने अपने बाण अपने पिता ब्रह्मा तथा अपने भाई ऋषियों(मरीची आदि) तथा बहन संध्या आदि पर चलाये। (शि. पु. रू. सं. स. ख अध्याय 3)। फलस्वरूप सभी कामासक्त हो गये। संध्या(पुत्री) के प्रति आसक्त हुए ब्रह्मा को शिवजी ने फटकारा। अन्त में ब्रह्माजी ने कामदेव को श्राप दिया कि वह शिवजी के नेत्र से जल जायगा(शि. पु. रु. सं. स. ख. 3/64)।

अत: निष्कर्ष यह है कि भगवान् शिव ने ब्रह्मा के वरदान एवं श्राप दोनों को सत्य करने के लिये ही उपरोक्त व्यवहार किया होगा।

शिवजी ने कहा कि यदि सभी देवगण इस लिंग की अर्चना करेंगे तो मैं इसे पुनः ग्रहण कर लूँगा। इसपर भगवान् विष्णु ने चारों वर्णों द्वारा शिवलिंग की पूजा का विधान किया ।

इसके पश्चात् जब भगवान् शंकर चित्रवन में विचरण कर रहे थे तब कामदेव ने पुनः उनपर आक्रमण की तैयारी की। यह देखकर शिवजी ने उसे क्रोध की दृष्टि से सिर से पैरतक देखा, जिससे वह तुरन्त भस्म हो गया। दग्ध हो जाने के पश्चात् वह पाँच पौधों के रूप में परिणत हो गया जिनके नाम हैं-चम्पक, बकुल, पाटला, जातीपुष्प और मल्लिका। कामदेव ने जो बाण छोड़े थे वे फलों के सहस्त्रों प्रकार के वृक्ष हो गये।

(3) शिवलिंग पूजा

दारुवन की उपरोक्त कथा का एक दूसरा रूप भी हमें इस पुराण के 'सरोमाहात्म्य' के बाईसवें अध्याय में मिलता है।

एक बार उमा के साथ भगवान् शंकर आकाशमार्ग से जा रहे थे। उस समय देवी ने अनेक ऋषियों को घोर तप में लीन देखा। वे इससे बहुत दुःखित हुयीं और शंकरजी से कहने लगीं कि ये दारुवन के ऋषिगण आपका अनुग्रह प्राप्त करने के लिये बहुत क्लेश सहन कर रहे हैं, अब उनके ऊपर दया कीजिये। भगवान् ने हँसकर कहा-हे देवि! आप सात्त्विकरूप से धर्म की अत्यन्त गहन गति को नहीं जानतीं। ये सबलोग धर्म को नहीं जानते और न ये लोग काम का त्याग कर सके हैं। ये लोग क्रोध से भी मुक्त नहीं हैं तथा मूढ़बुद्धिवाले हैं।

यह सुनकर पार्वती को बड़ा कौतुहल हुआ और कहने लगीं कि आप जो कहते हैं उसे प्रत्यक्ष करके दिखलायें। इसपर शंकरजी पार्वती को आकाश में छोड़कर ही नग्न युवक के रूप में दारुवन में भिक्षाटन के लिये पहुँच गये। उन्हें देखकर वहाँ की ऋषिपत्नियाँ काम के वशीभूत हो गयीं। यह सब देखकर ऋषि लोग क्रोध से अभिभूत होकर लकड़ी-पत्थर से उनके लिंगपर प्रहार करने लगे। इस प्रकार उनके प्रहार से शिवजी का लिंग चराचर को क्षुब्ध करता हुआ गिर पड़ा और वे स्वयं अन्तर्धान हो गये।

इसके पश्चात् सब ऋषि डरकर ब्रह्माजी के पास गये। उन्होंने उनको क्रोध करने और कामनाओं से ग्रस्त रहने के लिये फटकारा। तब सब मिलकर शिवजी की शरण में गये, तो उन्होंने कहा कि उस लिंग की सदैव पूजा करते रहने से ही तुम्हारा उद्धार हो सकेगा। तभी से शिवलिंगपूजा बराबर प्रचलित रही है।

उपरोक्त लिंग-पतनसंबंधी कथा 'शिव' एवं 'स्कन्द' पुराण में भी दी गयी है। पर उसमें न तो कामदेव से डरकर भागने की बात कही गयी है और न उमा देवी को कौतुक दिखाने की बात कही गयी है। उसमें कहा गया है कि शिवजी भिक्षा मांगते हुए स्वाभाविकरूप से ही दारुवन पहुँच गये थे और वहाँ ऋषिपत्नियाँ अकस्मात् उनके पीछे चल पड़ीं।

लिंगपूजासंबंधी एक अन्य कथा भी 'शिव' आदि पुराणों में पायी जाती है। एक बार ब्रह्मा और विष्णु में इस बात का झगड़ा हुआ कि उन दोनों में कौन बड़ा है, तो उनके सामने दिव्य शिवलिंग उत्पन्न हो गया। उन दोनों में यह शर्त लगी कि जो कोई इस लिंग के अंतिम छोर का पता लगा लेगा वही बड़ा माना जायगा। विष्णु नीचे की तरफ तथा ब्रह्मा ऊपर की तरफ गये। वापस लौटनेपर ब्रह्मा ने केतकी के फूल से झूठी गवाही दिलवायी कि उन्होंने लिंग का अंतिम छोर देख लिया है। इसी अपराध में उनका पंचम सिर शिव द्वारा काट डाला गया। और विष्णु के सत्यपरायण(कि उन्होंने उस लिंग का पता नहीं पाया) होने के कारण उन्हें शिव द्वारा वरिष्ठ पद दिया गया। और तभी से लिंगपूजा शुरू हो गयी।

(4) श्रीहरि को सुदर्शन चक्र की प्राप्ति

भगवान् शिव की आराधना से भगवान् विष्णु द्वारा सुदर्शन चक्र की प्राप्ति की कथा का जो स्वरूप 'शिव' आदि पुराणों में पाया जाया है, उससे भिन्न हम वामन पुराण में पाते हैं। शिव पुराण के अनुसार शिव के सहस्त्र नामों के साथ-साथ विष्णुजी कमल का फूल लिंगपर चढ़ाते जाते थे। भगवान् शिव ने परीक्षा के लिये एक फूल को कम कर दिया। ढूढ़ने पर फूल नहीं मिलनेपर विष्णुजी ने अपने कमल के समान एक नेत्र को चढ़ा दिया। फलस्वरूप भगवान् शिव ने प्रसन्न हो उन्हें सुदर्शन चक्र दे दिया। चक्र देने के पश्चात् शिवजी अन्तर्धान हो गये।

वामन पुराण की कथा इस प्रकार है। यह कथा 56 वें अध्याय में आती है। बहुत समय पहले श्रीदाम नाम का एक बड़ा असुर था जो तीनों लोकों पर विजय प्राप्त कर लेने के बाद भगवान् विष्णु का श्रीवत्स भी छीनना चाहता था। उस राक्षस के दुर्विचार को जानकर विष्णुजी भगवान् शिव के निकट कैलास पर गये। वहाँ जाकर उन्होंने अपने अगूँठे पर एक हजार वर्षतक खड़े रहकर तपस्या की। तपस्या से प्रसन्न होकर शिवजी ने उन्हें महातेजस्वी अमोघ सुदर्शन चक्र दिया और उनसे कहा कि इससे आप सभी देव-शत्रुओं या राक्षसों का सफाया कर सकते हैं क्योंकि यह अमोघ है।

भगवान् शिव के वचन सुनकर विष्णुजी ने कहा कि मैं यह कैसे जानूँ की यह चक्र सर्वत्र अमोघ एवं अजेय है? अत: इसकी परीक्षा के लिये मैं इसे आपके ऊपर ही छोड़ता हूँ। वासुदेव के इस प्रकार के वचन सुनकर महादेवजी ने कहा कि आप बिना किसी हिचकिचाहट के मेरे ऊपर इस चक्र को छोड़ दीजिये। अत: चक्र की शक्ति की परीक्षा के लिये विष्णु ने चक्र को भगवान् शिव पर छोड़ दिया। चक्र ने शिवजी के शरीर के तीन टुकड़े कर दिये। यह सब देखकर विष्णुजी शर्मिन्दा होकर भगवान् शिव के चरणों में गिर पड़े।

भगवान् शिव ने पुन: प्रसन्न होकर उन्हें उठाया और कहा कि चक्र ने केवल मेरे शरीर के ही टुकड़े किये हैं। मेरा वास्तवीक स्वरूप चक्र नहीं काट सकता और न ही अग्नि उसे जला सकती है। हे केशव तुम्हारे चक्र से बने मेरे शरीर के टुकड़े पवित्र माने जायँगे और वे हिरण्याक्ष, सुवर्णाक्ष और

विरूपाक्ष के रूप में जाने जायँगे।

उपसंहार

इस पुराण में भी भगवान् शिव को परमब्रह्म अथवा परम तत्त्व या परम सत्य कहा गया है। वही परम तत्त्व जब निर्गुणरूप को छोड़कर सृष्टि करता है तो ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र कहलाता है। भगवान् शिव सबके स्वामी, परम पवित्र, परमात्मा, भुवनों के स्वामी, ज्ञानदाता, तारक, देवताओं के नायक, शूलपाणी, भूतभव्य, सभी पापों को दूर करनेवाले, चराचरगुरु, सभी प्रकार के रोगों को दूर करनेवाले, अप्रमेय, अपरिमेय, योगेश्वर, विश्वरूप, शेषनाग को हार के रूप में धारण करनेवाले, सर्वेश्वर, परब्रह्म, त्र्यम्बक, ॐकार, परम कारण, वषट्कार, सर्वयज्ञमय, महामायाधर, सृष्टि, पालन एवं संहारकर्त्ता, चन्द्रार्द्धधर, भक्तवत्सल, नीलकण्ठ, सुर-सिद्ध आदि सभी द्वारा अर्चित, आशुतोष, महायोगेश्वर, सत् एवं असत्रूप, पशुपति, धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षदाता, वेदस्वरूप, गायत्रीरूप, अजन्मा तथा वेदों एवं उपनिषदों द्वारा स्तुत्य हैं।

भगवान् शिव के निर्गुण एवं सगुण दोनों रूपों की चर्चा इस पुराण में मिलती है। कुछ चुने हुए उपरोक्त विशेषणों में भगवान् शिव के दोनों रूपों की झलक मिलती है। जैसे-सगुणरूप में वे तीन नेत्रवाले, नीलकण्ठी तथा सर्पराज को हार के रूप में पहननेवाले महायोगी हैं।

भगवान् शिव की उपासना सभी प्रकार के लोग करते रहे हैं-चाहे वे देव हों चाहे दानव, राक्षस, मानव, यक्ष, किन्नर, गन्धर्व या नाग हों। उदाहरण के लिये रावण, विभीषण, खर, दूषण, त्रिशिरा, तक्षक, हारित, वापित, मृकंडु, आदित्य, चित्रांगद, रम्भा, इन्द्र, पराशर, व्यास, वायु, कार्तवीर्य, हनुमान्, मित्र, वरुण, ब्रह्मा तथा विष्णु आदि। भगवान् शिव की पूजा मुख्यतः लिंगपूजा ही है।

लिंगपूजा का महत्त्व बताते हुए कहा गया है कि इससे भोग एवं मोक्ष, स्वर्ग एवं कैवल्य, विद्या तथा ज्ञान आदि सबकुछ प्राप्त हो सकता है। लिंगपूजा सभी वर्णों एवं आश्रमों के लिये विहित है।

इस पुराण में नाना शैवतीर्थों एवं वहाँ स्थापित लिंगों की पूजा आदि संबंधी कथाएँ एवं उनके फल का वर्णन किया गया है। उदाहरण के लिये कुरूक्षेत्र एवं पृथुदक तीर्थ के आस-पास के सैकड़ों तीर्थों तथा वहाँ स्थापित लिंगों का वर्णन है। जैसे ब्रह्मसर, सन्निहित, स्थाणु, तथा पृथुदक आदि।

शिवोपासना में शतरुद्रिय के महत्त्व का भी संकेत इस पुराण में मिलता है। शिवनाम की महिमा बताते हुए कहा गया है कि इसके द्वारा व्यक्ति भवसागर से पार हो जाता है। इस पुराण में वेन द्वारा रचित शिव सहस्त्रनाम स्तोत्र पाया जाता है जिसके पाठ से पापों से मुक्ति, विद्या, तेज, यश की प्राप्ति तथा भूत, पिशाच, राक्षस, आदि के विघ्नों से बचाव होता है। यह सहस्त्रनाम स्तोत्र दक्ष प्रजापति द्वारा की गयी सहस्त्रनाम स्तुति, जिसका उल्लेख महाभारत, वायुपुराण तथा ब्रह्म पुराण में है, से काफी साम्य रखता है।

अन्य सभी पुराणों की भाँति इस पुराण में भी ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव की तात्त्विक एकता का प्रतिपादन है। यहाँ बताया गया है कि शिव एवं विष्णु में कोई भेद नहीं है, तथा जो इनमें भेद करता

है वह घोर नरक में जाता है।

अन्त में इस पुराण में कुछ प्रचलित शिवसंबंधी कथाओं का स्वरूप बड़ा ही विचित्र रूप से वर्णित है। उदाहरण के लिये दक्ष-यज्ञ एवं सती की कथा में बताया गया है कि सती ने दक्ष के यज्ञ में अपने पति के निमन्त्रण न मिलने के दु:ख एवं क्रोध से कैलासपर ही प्राण त्याग दिया न कि दक्ष की यज्ञशाला में। इसी प्रकार दारुवन में लिंग के पतन होनेवाली कथा के दो रूप इसी पुराण में प्राप्त होते हैं जो अन्य पुराणों की कथाओं से भिन्न हैं। कामदहन की कथा को भी यहाँपर बड़ी भिन्नता के साथ चित्रित किया गया है। यहाँपर विष्णु द्वारा सुदर्शन चक्र की प्राप्ति की कथा भी शिव पुराण से भिन्न पायी जाती है।

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

श्रद्धा-भक्ति एवं भाव का महत्त्व

श्रद्धावाँल्लभते धर्म्मं श्रद्धावानर्थमाप्नुयात्।
श्रद्धया साध्यते कामः श्रद्धावान्मोक्षमाप्नुयात्।।
अश्वमेधसहस्रं वा कर्म्म वेदोदितं कृतम्।
तत्सर्वं निष्फलं ब्रह्मन् यदि भक्तिविवर्जितम्।।

(नार. महापु. पूर्वखण्ड 4/6 तथा 11)

अश्रद्धयाहतं सर्वंकृतं यत्पारलौकिकम्। (पद्म पु. उत्तरखण्ड 126/25)

नास्ति श्रद्धासमं पुण्यं नास्ति श्रद्धासमं सुखम्।
नास्ति श्रद्धासमं तीर्थं संसारे प्राणिनां नृप।।

(पद्म महापु. मूमिखण्ड 39/124-125)

अर्थात्-श्रद्धावान् व्यक्ति को धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति हो सकती है। हजारों अश्वमेधयज्ञ या अन्य वेदोक्तकर्म कर लिये जायँ पर अगर वे भक्तिभाव से रहित हैं तो वे अवश्य ही निष्फल होंगे।

अश्रद्धापूर्वक परलोक के लिये किया गया सभी कुछ नष्ट हो जाता है। संसार में प्राणियों के लिये श्रद्धा के समान पुण्य, श्रद्धा के समान सुख और श्रद्धा के समान तीर्थ नहीं है।

भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि बिना श्रद्धा के किया हुआ हवन, दिया हुआ दान, तपा हुआ तप और जो कुछ भी किया हुआ शुभ कर्म है-वह समस्त 'असत्' है- इस प्रकार कहा जाता है; इसलिये वह न तो इस लोक में लाभदायक है और न मरने के बाद ही।

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह।। (श्रीमद्भगवद्गीता 17/28)